श्रीमती काशी बाई

बनाम

सुधा रानी घोस और अन्य

25 फरवरी, 1958

(भागवत, एल. कपूर और गजेंद्रगडकर न्यायमूर्तिगण)

प्रतिकूल कब्जा — कोयला खदान — अतिक्रमण तथा आंतरायिक संचालन — क्या इससे प्रतिकूल कब्जा स्थापित हो सकता है।

अपीलकर्ता तथा उत्तरदाता समीपवर्ती क्षेत्रों में कोयला खनन अधिकारों के पट्टाधारी थे। सन् 1917 में अपीलकर्ताओं के पूर्वाधिकारी ने उत्तरदाताओं के पूर्वाधिकारियों को पट्टे पर दी गई भूमि के एक भाग में अतिक्रमण कर लिया, दो ढलान मार्ग तथा दो वायु-कूपक निर्मित किए तथा वहां से कोयला निकाला। सन् 1923 तक कोई खनन कार्य नहीं हुआ, तत्पश्चात कार्य पुनः प्रारंभ हुआ और सन् 1926 तक चला; सन् 1931 में पुनः आरंभ होकर सन् 1933 तक चला। सन् 1939 में खदान को अल्प अवधि के लिए संचालित किया गया। सन् 1944 में अपीलकर्ताओं द्वारा पुनः संचालन आरंभ किया गया। सन् 1945 में उत्तरदाताओं ने मध्यवर्ती सीमा के निर्धारण, अतिक्रमित क्षेत्र के कब्जे की पुनर्प्राप्ति तथा अपीलकर्ताओं द्वारा अवैध रूप से निकाले गए कोयले के लिए क्षतिपूर्ति हेतु वाद दायर किया। अपीलकर्ताओं ने, *अन्य बातों के साथ,* यह तर्क दिया कि वे विवादित क्षेत्र पर एकाधिकार, अनन्य एवं अविच्छिन्न कब्जे में रहे, जो उत्तरदाताओं की जानकारी में था, तथा उन्होंने प्रतिकूल कब्जे द्वारा स्वामित्व प्राप्त कर लिया है:

अभिनिर्धारित — अपीलकर्ताओं अथवा उनके पूर्वाधिकारियों द्वारा जिस प्रकार एवं अवधि के लिए खदान का आंतरायिक संचालन किया गया, वह ऐसा कब्जा स्थापित करने हेतु पूर्णतः अपर्याप्त था, जिससे प्रतिकूल कब्जा सिद्ध हो सके। जिन अवधियों में कोई खनन कार्य नहीं हुआ, उन अवधियों में अपीलकर्ताओं के किसी प्रकार के कब्जे का प्रमाण नहीं दिया

गया, तथा यह अनुमान कि ऐसी अवधियों में कब्जा वास्तविक स्वामी को पुनः प्राप्त हो गया था, खंडित नहीं किया जा सका।

नागेश्वर बक्स राय बनाम बंगाल कोल कंपनी, [1930] एल.आर. 58 आई.ए. 29 तथा *भारत के सचिव बनाम देबेंद्र लाल खान*, [1933] एल.आर. 61 आई.ए. 78, पृथक किए गए।

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार : दीवानी अपील सं० 118-119/1956।

पटना उच्च न्यायालय द्वारा अपील मूल डिक्री सं० 252 एवं 254/1948 में दिनांक 27 सितंबर, 1951 को पारित निर्णय एवं डिक्री के विरुद्ध अपील, जो क्रमशः स्वत्व वाद सं० 16 एवं 50/1945 में धनबाद के अधीनस्थ न्यायाधीश द्वारा दिनांक 11 मई, 1948 को पारित निर्णय एवं डिक्री से उत्पन्न हुई थीं।

एम. सी. सीतलवाड़, भारत के महान्यायवादी, क्षितीन्द्र नाथ भट्टाचार्य, एस. एन. एंडले, जे. बी. दादाचांजी तथा रमेश्वर नाथ, अपीलकर्ता की ओर से।

एन. सी. चटर्जी, एस. सी. बनर्जी तथा पी. आर. चटर्जी, उत्तरदाता सं० 7 से 13 की ओर से।

पी. के. चटर्जी, उत्तरदाता सं० 2 से 4 तथा 6 (अवयस्क) की ओर से।

गौरी दयाल, उत्तरदाता सं० 5 की ओर से।

1958, 25 फरवरी। न्यायालय का निम्नलिखित निर्णय जिनके द्वारा प्रदान किया गया

कपूर, न्यायमूर्ति— पटना उच्च न्यायालय के निर्णय एवं दो डिक्री के विरुद्ध, उक्त न्यायालय की अनुमति से दायर इन दोनों अपीलों में विचारण हेतु एक समान एवं एकमात्र प्रश्न प्रतिकूल कब्जे का है। अधीनस्थ न्यायाधीश, धनबाद के न्यायालय में दो परस्पर वाद दायर किए गए, जिनमें तथ्य एवं विधि के समान प्रश्न उठाए गए। अपीलकर्ता तथा उत्तरदाता मणिलाल बेचारलाल सेंगवी एक वाद (वाद सं० 16/1945) में उत्तरदाता तथा दूसरे वाद (वाद सं० 50/1945) में वादी थे। उत्तरदाता सं० 1 से 3 पहले वाद में वादी तथा दूसरे में उत्तरदाता थे। अन्य उत्तरदाता दूसरे वाद में उत्तरदाता थे और अपीलीय स्तर पर, प्रथम वाद के निर्णय

के विरुद्ध दायर अपील में, दीवानी प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10 के अधीन वादी के रूप में जोड़े गए। दोनों वादों में अपीलकर्ता तथा उत्तरदाता मणिलाल बेचारलाल सेंगवी के विरुद्ध डिक्री पारित की गई, जिसके विरुद्ध उन्होंने पटना उच्च न्यायालय में दो अपीलें दायर कीं। उक्त दोनों अपीलों को दिनांक 27 सितंबर, 1951 के एक ही निर्णय द्वारा निरस्त कर दिया गया, यद्यपि दो पृथक डिक्री तैयार की गईं। इस निर्णय एवं उक्त डिक्री के विरुद्ध अपीलकर्ता ने इस न्यायालय में दो अपीलें दायर की हैं, जिन्हें एक साथ समेकित कर इस निर्णय द्वारा निपटाया जा रहा है।

इन दोनों अपीलों के निर्णय के लिए आवश्यक तथ्य यह हैं कि दिनांक 26 नवम्बर, 1894 को गंगा नारायण सिंह, जो परगना कट्रास के जमींदार एवं स्वामी थे, ने राम दयाल मजूमदार को दो भूखंडों—एक मौजा कट्रास में तथा दूसरा मौजा भूपतडीह में—"कोयला तथा कोयला खनन अधिकारों" का पट्टा प्रदान किया। दिनांक 6 नवम्बर, 1894 को उन्होंने उपर्युक्त पट्टे में वर्णित भूखंडों से सटे भूखंडों का इसी प्रकार का पट्टा भूधर नाथ राय को प्रदान किया। वाद सं० 32/1896 में इन दोनों भूखंडों के समूहों की सीमाएँ निर्धारित की गईं और यह निर्धारण उस वाद में पारित डिक्री में संलग्न मानचित्र में दर्शाया गया। राम दयाल की मृत्यु के पश्चात उनके पुत्र प्रफुल्ल, कुमुद, शरत, सिरिश तथा गिरीश ने पट्टाधिकार प्राप्त किया, जिसे उन्होंने दिनांक 19 अक्टूबर, 1918 को एक पंजीकृत पट्टा एवं कबूलियत के माध्यम से 999 वर्ष की अवधि के लिए ललित मोहन बोस को प्रदान किया। इस बीच बेनेट नामक व्यक्ति, जिसने बेलवुड के साथ मिलकर दिनांक 5 सितम्बर, 1917 को कट्रासगढ़ के राजा शक्ति नारायण सिंह से कोयला खनन का पट्टा प्राप्त किया था, ने ललित मोहन बोस को पट्टे पर दी गई भूमि के उत्तरी भाग में अतिक्रमण कर लिया तथा वहाँ दो ढलान मार्ग एवं दो वायु-कूपक बनाकर उस क्षेत्र से कोयला निकाला। इससे पक्षकारों के मध्य विवाद उत्पन्न हुआ, जिसका सौहार्दपूर्ण समाधान हुआ और अतिक्रमित क्षेत्र का कब्जा ललित मोहन बोस को वापस कर दिया गया। इस तथ्य का अपीलकर्ता तथा उत्तरदाता मणिलाल बेचारलाल

सेंगवी द्वारा अपने लिखित कथन एवं वादपत्र में खंडन किया गया। ललित मोहन बोस का सन् 1933 में निधन हो गया और उन्होंने एक वसीयत छोड़ी, जिसके निष्पादक उनकी पत्नी राधा रानी तथा उनके भाई नागेंद्र नाथ बोस थे। उन्होंने सन् 1933 में ललित मोहन बोस के कब्जे में स्थित 17 बीघा भूमि केशवजी लालजी को पट्टे पर दे दी। ललित मोहन बोस को पट्टे पर दी गई शेष भूमि का भाग दिनांक 15 मार्च, 1938 को ब्रजेंद्र नाथ घोष तथा विश्वनाथ प्रसाद (उपरोक्त दो उत्तरदाता) एवं रामचंद दुबे को पट्टे पर दिया गया, यद्यपि उसका कब्जा उन्हें जुलाई, 1938 में दिया गया, और इन दोनों उत्तरदाताओं तथा रामचंद्र दुबे ने वेस्ट कट्रास कोलियरी नाम से कोयला व्यवसाय संचालित किया। रामचंद्र दुबे की मृत्यु के पश्चात उनकी संपत्ति उनके पुत्रों एवं पत्नी को प्राप्त हुई, जिन्होंने दिनांक 25 जून, 1944 को अपना अधिकार, स्वत्व एवं हित नागेंद्र नाथ बोस को विक्रय कर दिया। ये तीनों, अर्थात् ब्रजेंद्र नाथ घोष, विश्वनाथ प्रसाद तथा नागेंद्र नाथ बोस, वाद सं० 16/1945 में वादी थे।

जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है, राजा शक्ति नारायण सिंह ने दिनांक 5 सितम्बर, 1917 को 256 बीघा क्षेत्रफल की भूमि बेनेट एवं बेलवुड को पट्टे पर दी थी, और उन्होंने अपने अधिकार न्यू कट्रास कोल कंपनी लिमिटेड को हस्तांतरित कर दिए। उक्त कंपनी ने कुछ समय तक कोयला खदान का संचालन किया, किन्तु तत्पश्चात परिसमापन में चली गई, और निष्पादन वाद सं० 293/1922 में कंपनी के अधिकार, स्वत्व एवं हित का विक्रय हुआ, जिसे श्रीमती काशी बाई (अपीलकर्ता) के ससुर नानजी खेंगरजी तथा लीरा राजा एवं अन्य ने क्रय किया। अगस्त, 1923 में नानजी खेंगरजी तथा लीरा राजा के मध्य विभाजन हुआ, जिसमें पट्टे पर प्राप्त कोयला क्षेत्र का पश्चिमी भाग नानजी खेंगरजी के हिस्से में तथा पूर्वी भाग लीरा राजा के हिस्से में आया। नानजी खेंगरजी ने खेंगरजी त्रिकू एंड कंपनी के नाम से व्यवसाय संचालित किया और उक्त खदान कट्रास न्यू कोलियरी के नाम से जानी जाने लगी। सन् 1928 में नानजी खेंगरजी की मृत्यु के पश्चात उनके पुत्र रतीलाल नानजी ने संपत्ति का उत्तराधिकार प्राप्त किया, और सन् 1933 के सितम्बर में उनकी मृत्यु के पश्चात यह

संपत्ति अपीलकर्ता श्रीमती काशी बाई, जो रतीलाल की विधवा थीं, को प्राप्त हुई। दिसंबर, 1944 में उन्होंने (श्रीमती काशी बाई) उत्तरदाता मणिलाल बेचारलाल सेंगवी के साथ साझेदारी स्थापित की।

दिनांक 24 मार्च, 1945 को ब्रजेंद्र नाथ घोष, विश्वनाथ प्रसाद तथा नागेंद्र नाथ बोस, जो उत्तरदाता सं० 1 से 3 हैं, ने वादी सं० 1 से 3 के रूप में एक वाद (वाद सं० 16/1945) संस्थित किया, जिसमें उत्तरदाता सं० 1 श्रीमती काशी बाई (वर्तमान अपीलकर्ता) तथा उत्तरदाता सं० 2 मणिलाल बेचारलाल सेंगवी (वर्तमान उत्तरदाता सं० 10) के विरुद्ध मध्यवर्ती सीमा के निर्धारण, उत्तरदाताओं द्वारा अतिक्रमित क्षेत्र के कब्जे की पुनर्प्राप्ति, उनके द्वारा अवैध रूप से निकाले गए कोयले के लिए क्षतिपूर्ति तथा निषेधाज्ञा की प्रार्थना की गई। उन्होंने यह आरोप लगाया कि उत्तरदाताओं ने वादपत्र के साथ संलग्न मानचित्र में दर्शित विवादित क्षेत्र पर अवैध रूप से कब्जा कर लिया तथा उनकी खदान से कोयला अवैध रूप से निकाला। उत्तरदाताओं ने दिनांक 29 जून, 1945 को अपने लिखित कथन में वादियों के आरोपों का खंडन किया। उन्होंने यह दलील दी कि विवादित क्षेत्र नानजी खेंगरजी एवं लीरा राजा द्वारा अर्जित किया गया था तथा उनके द्वारा संचालित किया जाता रहा, और वे उक्त क्षेत्र पर एकाधिकार, अनन्य, अविच्छिन्न एवं निर्बाध कब्जे में रहे, जो वादियों के ज्ञान में था, अतः उन्होंने प्रतिकूल कब्जे द्वारा स्वामित्व प्राप्त कर लिया। बेनेट एवं बेलवुड से अर्जन के आधार पर स्वामित्व का जो दावा उन्होंने प्रस्तुत किया था, उसे अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है और अब वह विवाद का विषय नहीं है, हमारे समक्ष अब केवल प्रतिकूल कब्जे का प्रश्न शेष है।

उत्तरदाताओं द्वारा वाद सं० 16/1945 में, अर्थात् श्रीमती काशी बाई (अपीलकर्ता) एवं मणिलाल बेचारलाल सेंगवी (उत्तरदाता), द्वारा उत्तरदाताओं सं० 1 से 3 के विरुद्ध तथा ललित मोहन बोस के उत्तराधिकारियों एवं मूल अनुदाता राजा शक्ति नारायण सिंह के पुत्र पूर्णेंदु नारायण सिंह के विरुद्ध प्रतिवाद वाद सं० 50/1945 दायर किया गया। इस वाद में वादियों

द्वारा लगाए गए आरोप वही थे, जो उन्होंने वाद सं० 16/1945 में उत्तरदाता के रूप में अपने लिखित कथन में प्रस्तुत किए थे। दोनों वादों की एक साथ सुनवाई की गई तथा समान मुद्दे निर्धारित किए गए। विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश ने वाद सं० 16/1945 को स्वीकृत किया तथा वाद सं० 50/1945 को निरस्त कर दिया, जिससे दोनों वाद उत्तरदाता सं० 1 से 3 के पक्ष में निर्णीत हुए। यह निष्कर्ष दिया गया कि विवादित भूमि उत्तरदाता सं० 1 से 3, अर्थात् ब्रजेंद्र नाथ घोष, विश्वनाथ प्रसाद एवं नागेंद्र नाथ बोस को पट्टे पर दी गई भूमि के अंतर्गत आती है, और अतः वह क्षेत्र, जिसमें सीम सं० 9 के दो ढलान मार्ग स्थित थे, उनके पट्टे की भूमि का ही भाग है। साथ ही यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि अपीलकर्ता तथा मणिलाल बेचारलाल सेंगवी द्वारा विवादित भूमि पर अतिक्रमण सिद्ध हुआ है। प्रतिकूल कब्जे के संबंध में उन्होंने यह अभिनिर्धारित किया कि सीम सं० 9 में दो ढलान मार्ग तथा वायु-कूपक सन् 1917 में बेनेट द्वारा बनाए गए थे; खेंगरजी त्रिकू एंड कंपनी द्वारा सीम का निरंतर संचालन नहीं किया गया, अपितु केवल सन् 1923 से 1926 तथा सन् 1931 से 1933 के मध्य ही संचालन हुआ; सन् 1939 में पुनः संचालन प्रारंभ किया गया, किन्तु वह कितनी अवधि तक चला, यह सिद्ध नहीं किया गया; तथा सन् 1944 में पुनः संचालन आरंभ हुआ। उन्होंने यह भी पाया कि विवादित क्षेत्र सीम सं० 9 तक ही सीमित था। इन तथ्यों के आधार पर उनका अभिमत था कि उत्तरदाता सं० 1 से 3 का विस्थापन सिद्ध नहीं हुआ है तथा उनके विरुद्ध प्रतिकूल कब्जा स्थापित नहीं हुआ है। उन्होंने आगे यह भी अभिनिर्धारित किया कि सीम के एक भाग के संचालन से, भले ही निरंतर कब्जा सिद्ध हो जाए, अतिक्रमणकर्ता को सम्पूर्ण सीम पर अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता। क्षतिपूर्ति के संबंध में विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश ने यह निर्णय दिया कि उत्तरदाता सं० 1 से 3 दिसंबर, 1944 से क्षतिपूर्ति प्राप्त करने के अधिकारी हैं, तथा उसकी राशि का निर्धारण आगामी कार्यवाही में एक आयुक्त की नियुक्ति द्वारा किया जाएगा।

उच्च न्यायालय ने अपील में विचार करते हुए विचारण न्यायालय के निष्कर्षों की पुष्टि की तथा यह धारित किया कि विवादित भूमि उत्तरदाता सं० 1 से 3 को पट्टे पर दी गई भूमि का ही भाग है; अपीलकर्ता तथा मणिलाल बेचारलाल सैंगवी ने विवादित भूमि पर अतिक्रमण किया था; तथा सीम का संचालन निरंतर नहीं रहा, बल्कि केवल उपर्युक्त अवधियों के दौरान ही किया गया। उच्च न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि भले ही निरंतर कब्जा एवं खदान का संचालन सिद्ध हो, तब भी सम्पूर्ण खदान पर प्रतिकूल कब्जे द्वारा स्वामित्व अर्जित नहीं किया जा सकता। उच्च न्यायालय में उत्तरदाता सं० 1 से 3 के पक्ष में पट्टे की वैधता को संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 107 के आधार पर चुनौती दी गई थी, किन्तु चूँकि यह प्रश्न विचारण न्यायालय में न तो उठाया गया था और न ही विवादित किया गया था, अतः उच्च न्यायालय ने वाद सं० 50/1945 के उत्तरदाता सं० 4 से 10 को वाद सं० 16/1945 से उत्पन्न अपील में सम्मिलित करने की अनुमति प्रदान की, "ताकि मुद्दों का सम्यक् न्यायनिर्णयण हो सके तथा कार्यवाहियों की पुनरावृत्ति से बचा जा सके"। यह प्रश्न भी अब हमारे समक्ष विवाद का विषय नहीं है। अपीलकर्ता ने पटना उच्च न्यायालय के उक्त निर्णय एवं दो डिक्री के विरुद्ध दो अपीलें प्रस्तुत की हैं। चूँकि विवादित भूमि के स्वामित्व का प्रश्न अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा उत्तरदाताओं के पक्ष में निर्णीत किया जा चुका है, अतः वह प्रश्न हमारे समक्ष नहीं उठाया गया है, और पक्षकारों के मध्य विवाद केवल प्रतिकूल कब्जे के प्रश्न तक सीमित है।

अपीलकर्ता की ओर से विद्वान महान्यायवादी ने यह तर्क दिया कि विवादित क्षेत्र में खनन कार्य, यद्यपि अधीनस्थ न्यायालयों के अनुसार आंतरायिक रूप से किया गया था, तथापि इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि उक्त क्षेत्र तथा खदान पर कब्जा अपीलकर्ता का था, और चूँकि वह आवश्यक 12 वर्षों की अवधि तक रहा, अतः उसका कब्जा प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से स्वामित्व में परिणत हो गया। हमारे मत में, अपीलकर्ता द्वारा किए गए संचालन निरंतर, खुला एवं प्रतिकूल कब्जा स्थापित करने या 12 वर्षों की विधिक अवधि तक

प्रतिकूल स्वामित्व के दावे के साथ असंगत हैं, जो प्रतिकूल कब्जा स्थापित करने के लिए आवश्यक है। यह तर्क दिया गया कि कोयला खदान के संबंध में प्रतिकूल कब्जा स्थापित करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि खदान का 12 वर्षों तक निरंतर संचालन किया गया हो, बल्कि यह पर्याप्त है कि अपीलकर्ता ने, यद्यपि बीच-बीच में लंबे अंतराल रहे हों, कुल मिलाकर 12 वर्षों तक खनन कार्य किया हो। हम इस तर्क को स्वीकार करने में असमर्थ हैं। यद्यपि कोयला खनन क्षेत्र के संबंध में प्रतिकूल कब्जा स्थापित करने हेतु 12 वर्षों तक निरंतर खनन कार्य किया जाना आवश्यक नहीं हो सकता, तथापि खनन क्षेत्र तथा खदान पर निरंतर कब्जा, प्रतिकूल कब्जा सिद्ध करने का एक आवश्यक तत्व है। अपीलकर्ता द्वारा जो तथ्य सिद्ध किए गए हैं, वे यह दर्शाते हैं कि बेनेट द्वारा बनाए गए दो ढलान मार्गों का संचालन सन् 1917 अथवा 1918 में अपीलकर्ता के पूर्वाधिकारी द्वारा किया गया; तत्पश्चात सन् 1923 तक कोई खनन कार्य नहीं हुआ, जब पुनः संचालन प्रारंभ हुआ और सन् 1926 तक चला। सन् 1926 में संचालन बंद हो गया और सन् 1931 में पुनः आरंभ होकर सन् 1933 तक चला, जिसके बाद पुनः बंद हो गया; सन् 1939 में संचालन हुआ या नहीं, यह स्पष्ट नहीं है, किन्तु सन् 1939 से 1944 तक कोई संचालन नहीं हुआ, और सन् 1944 में अपीलकर्ता द्वारा पुनः आरंभ किया गया। जिन अवधियों में कोई खनन कार्य नहीं हुआ, उन अवधियों में अपीलकर्ता के किसी प्रकार के कब्जे का प्रमाण प्रस्तुत नहीं किया गया है, और इस प्रकार विधि द्वारा यह जो अनुमान किया जाता है कि ऐसी अवधि में कब्जा वास्तविक स्वामी को पुनः प्राप्त हो जाता है, उसका खंडन नहीं किया गया है।

नागेश्वर बक्स राय बनाम बंगाल कोल कंपनी[1], जिस पर विद्वान महान्यायवादी द्वारा अवलंबन किया गया है, उनके तर्क का समर्थन नहीं करता। उस प्रकरण में कंपनी, जिसने प्रतिकूल कब्जे का दावा किया था, ऐसे तथ्यों को स्थापित करने में सफल हुई थी जो पूरे गाँव के अंतर्गत खनिजों पर अधिकार के दावे के अनुरूप थे। उन्होंने खुले रूप से तीन भिन्न

1 [1930] एल.आर. 58 आई.ए. 29।

स्थानों पर खदानें खोदीं, जिनमें से दो, तीसरे स्थान से आधा मील की दूरी पर थीं। कंपनी ने अपने विवेक से स्थानों का चयन किया, मशीनरी एवं उपकरण वहाँ स्थापित किए तथा अपने कर्मचारियों के लिए आवास निर्मित किए। कंपनी की ओर से कोई गोपनीयता नहीं थी और उन्होंने स्पष्ट रूप से ऐसा आचरण किया मानो वे केवल एक खदान ही नहीं, बल्कि पूरे गाँव के अंतर्गत स्थित सभी खनिज क्षेत्रों के कब्जे में हों, तथा वे निरंतर यह दावा करते रहे कि उन्हें गाँव के किसी भी भाग में खदान खोदने का अधिकार है। कंपनी यह *सद्भावनापूर्ण* विश्वास रखती थी कि अपने पट्टे के अंतर्गत उसे समस्त क्षेत्र में खनन का अधिकार प्राप्त है। इन परिस्थितियों में प्रिवी काउंसिल ने यह अभिनिर्धारित किया कि वाद परिसीमा अधिनियम की धारा 144 के अधीन वर्जित है, क्योंकि कंपनी पूरे गाँव के अंतर्गत खनिजों पर 12 वर्षों से अधिक समय तक प्रतिकूल कब्जे में रही थी। लॉर्ड मैकमिलन ने पृष्ठ 35 पर यह अभिनिर्धारित किया कि "कब्जा तथ्य का प्रश्न है और कब्जे की सीमा तथ्य के निष्कर्ष के रूप में निर्धारित की जा सकती है।" तथा पृष्ठ 37 पर यह अभिमत व्यक्त किया गया:

"उनके लॉर्डशिप इस सिद्धांत को न तो नकारने और न ही कमजोर करने के इच्छुक हैं कि सामान्य नियम के रूप में जहाँ स्वामित्व प्रतिकूल कब्जे पर आधारित होता है, वहाँ वह स्वामित्व उसी क्षेत्र तक सीमित होगा, जिस पर वास्तविक कब्जा किया गया हो। किन्तु इस सामान्य नियम का अनुप्रयोग प्रत्येक मामले के विशिष्ट तथ्यों पर निर्भर करेगा।"

उस प्रकरण में प्रतिकूल कब्जे के पक्ष में दिया गया निष्कर्ष केवल उस विशिष्ट मामले के तथ्यों तक ही सीमित माना जाएगा।

विद्वान महान्यायवादी द्वारा जिस अन्य वाद पर अवलंबन किया गया, वह *भारत के सचिव बनाम देबेंद्र लाल खान*[1] है। उस वाद में एक जमींदार ने नौगम्य नदी में मत्स्याधिकार पर प्रतिकूल कब्जे के आधार पर क्राउन के विरुद्ध स्वामित्व का दावा किया था। यह धारित किया गया कि कब्जा निरंतरता की दृष्टि से पर्याप्त हो सकता है, भले ही कब्जे के सिद्ध कार्य

1 [1933] एल.आर. 61 आई.ए. 78।

उस अवधि के प्रत्येक क्षण को आवृत न करते हों। वह प्रकरण मत्स्याधिकार से संबंधित था। यह सत्य है कि प्रतिकूल कब्जा स्थापित करने के लिए कब्जे का स्वरूप भिन्न-भिन्न हो सकता है। वर्तमान प्रकरण में ऐसा कोई कब्जा सिद्ध नहीं किया गया है, जो कब्जे के स्वरूप तथा कब्जे में ली गई वस्तु की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए इस एकमात्र निष्कर्ष तक पहुँचाए कि अपीलकर्ता ने प्रतिकूल कब्जे द्वारा अपना स्वामित्व पूर्ण कर लिया है। उपर्युक्त प्रकार एवं अवधि के लिए खदान का आंतरायिक संचालन, ऐसे कब्जे को स्थापित करने हेतु पूर्णतः अपर्याप्त है, जिससे प्रतिकूल कब्जा सिद्ध हो सके अथवा उससे ऐसा अनुमान लगाया जा सके। हम उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त अभिमत से सहमत हैं और अतः इन अपीलों को व्यय सहित निरस्त करते हैं। दोनों अपीलों के लिए एक ही व्यय निर्धारित होगा, न्यायालय शुल्क को छोड़कर।

याचिकाएं खारिज कर दी गईं।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।